भारतीय भाषा नीति की इक्कीसवीं सदी छाप (ब्रांड) में विदेशी भाषा की शिक्षा के बारे में

जोगा सिंह (डा.)

पिछले कोई तीस वर्षों में तीन शिक्षा और भाषा नीतियां भारत की झोली में डाली जा चुकी हैं। मेरे ख्याल में किसी भी देश के राजनैतिक और प्रशासनिक नेताओं ने इतना सामर्थ्य नहीं दिखाया होगा कि देश के नागरिकों को इतने थोड़े समय में शिक्षा चाहे न ही सही पर इतनी शिक्षा नीतियों के साथ माला-माल किया हो। जब हम देखतें हैं कि हरेक शिक्षा नीति के भी कई-कई छाप एक साथ चल रहे हैं तो भारतीय अपने आप को खूब माला-माल हुआ अनुभव कर सकते हैं। इस लिए, ऐसी माला-माल करने वाली नीति और इसके पीछे काम कर रही समझ या बेसमझी की पड़ताल ज़रूरी है। इस निबंध में नई शिक्षा नीति के प्रस्ताव में विदेशी भाषा की शिक्षा के बारे में कुछ सिफारिशों पर विचार किया गया है। (भाषा विज्ञान के अनुसार विदेशी भाषा का अर्थ प्रत्येक वह भाषा है जो बच्चे की मातृ-भाषा नहीं है। इस निबंध में भी यही धारणा है)।

नई शिक्षा नीति के बारे में कस्तूरीरंगन समिति के प्रस्ताव में भाषा के बारे में ये सिफ़ारिशें दर्ज हैं: १. बच्चा तीन साल की उम्र से स्कूल जाएगा और पहले दिन से तीन भाषा मन्त्र (सूत्र) के आधार पर तीन भाषाओं का अध्ययन करेगा; २. हिंदी क्षेत्र के लिए ये तीन भाषाएं होंगी हिंदी (मातृ-भाषा के तौर पर), अंग्रेज़ी और संविधान की आठवीं सूची में दर्ज कोई आधुनिक भारतीय भाषा; संस्कृत को भी महत्त्वपूर्ण आधुनिक भारतीय भाषा का दर्जा दिया गया है; ३. अहिन्दी भाषी क्षेत्र के लिए ये तीन भाषाएं मूल प्रस्ताव में तो मातृ-भाषा, हिंदी और अंग्रेज़ी दर्ज थी लेकिन तामिलनाडू और दूसरे क्षेत्रों के विरोध के बाद पुराना तीन-भाषा मन्त्र (मातृ-भाषा, एक भारतीय भाषा और अंग्रेजी) कर दिया गया; ४. जहां भी संभव हो (जहां भी संभव हो) पांचवी कक्षा तक (अच्छा हो कि आठवीं कक्षा तक) शिक्षा का माध्यम पारिवारिक/मातृ/स्थानीय भाषा होगी; जिन विद्यार्थियों की (जिन विद्यार्थियों की) शिक्षा का माध्यम मातृ-भाषा होगा वे आठवीं कक्षा या इससे भी पहले विज्ञान मातृ-भाषा और अंग्रेज़ी दो भाषाओं में पढ़ेंगे; ५. जो विद्यार्थी तीन भाषाओं में से कोई भाषा बदलना चाहते हैं वे छठी कक्षा से ऐसा कर सकते हैं, बशर्ते कि छोड़ी जाने वाली भाषा में उन्होंने संतोषजनक सामर्थय हासिल कर लिया हो; पर इस परिवर्तन के लिए उपरोक्त (२) और (३) शर्तें लागू रहेंगी; ६. देस का प्रत्येक विद्यार्थी छठी से आठवीं कक्षा के बीच भारतीय भाषाओं के बारे में एक मस्ती (फन) कोर्स करेगा; इस मस्ती कोर्स में 'भारतीय भाषाओं की विलक्षण एकता' के बारे में पढ़ाया जाएगा; ७. प्रत्येक विद्यार्थी छठी से आठवीं कक्षा के बीच में किसी एक भारतीय शास्त्रीय भाषा पर एक दो साल का कोर्स करेगा; ८. छठी से आठवीं कक्षा के बीच में विद्यार्थी कोई एक विदेशी भाषा मुख्य विषय के रूप में ले सकेगा और वह यह विषय

आगे भी ले जा सकेगा; ९ वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग और क्षेत्रीय शाखाएं विद्वानों और विशेषज्ञों के साथ तकनीकी शब्दावली के निर्माण और प्रमाणिकीकरण के लिए ताल-मेल करेंगी; हिंदी और संस्कृत के लिए यह काम राज्य सरकारों के साथ ताल-मेल के साथ केंद्रीय स्तर पर होगा और बाकी भाषाओं के लिए राज्य स्तर पर; विभिन्न भाषाओं में अधिक से अधिक साझा तकनीकी शब्दावली को यक़ीनन बनाने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों में आवश्यक ताल-मेल होगा।

तीन साल से ही बच्चों को तीन भाषाएं सिखाने का संकल्पात्मक आधार प्रस्ताव में यह बताया गया है कि 'दो से आठ साल की उम्र में बच्चों में एक ही समय में कई भाषाएं सीखने का लचकदार सामर्थ्य होता है जिस का प्रयोग किया जाना चाहिए' (प. ७९)।

दुनिया की सबसे अव्वल दर्जे की खोज व शिक्षा संस्था अमेरिका की एम्. आई. टी. की विस्तृत आधार पर की गई खोज पर आधारित निम्न कथन इस धारणा की सत्यता और असत्यता पर प्रकाश डालने में हमारी मदद करेगा:

'हज़ारों लोगों ने जिन्होंने २० साल की उम्र के बाद (विदेशी भाषा) सीखनी शुरू की उन्होंने लगभग मातृ-भाषियों के बराबर अंक हासिल किये....जिन पड़तालों में बच्चों और बड़ों (बालिगों) को एक जैसी स्थितियों में रख कर सिखाने का उद्देश्य सामने रख कर सिखाने की तुलना की गई, उन पड़तालों में यह सामने आया कि बड़ों की कारगुज़ारी बच्चों से बेहतर थी बुरी नहीं थी'।

(https://medium.com/@chacon/mit-scientists-prove-adults-learn-language-to-fluency-nearly-as-well-as-children-1de888d1d45f?fbclid=IwAR0cSb4zP38MLDngtkWs7kQ51Mou_qsjXM4qiDo_-KTz1WhHeeXIGcxniFM)

क्योंकि हमारे यहाँ विदेशी भाषा सारी शैक्षिक उम्र के लिए सिखाई जाती है, इस लिए आईए लगते हाथ यह भी देख लें कि विदेशी भाषा सीखने में समय कितना लगता है। इसी खोज में सामने आया कि '२० साल की उम्र के बाद सीखना शुरू करने वाली टोली ने बड़ी मुश्किल व्याकरण परीक्षा में भी ८०-८५ प्रतिशत अंक प्राप्त किए'। (९० प्रतिशत वाले को मातृ-भाषी के बराबर माना जाता है)। 'लोग शुन्य से शुरू कर-कर एक-दो साल में इतना भाषा सामर्थ्य हासिल कर लेते हैं जितना इतने समय में बच्चे हासिल नहीं कर सकते' (वही)।

इंग्लैंड में हुई एक खोज के ऐसे ही नतीजे इस डोर से देखे जा सकते हैं:

https://theconversation.com/whats-the-best-way-to-teach-children-a-second-language-new-research-produces-surprising-results-122059?fbclid=IwAR1dTTxunVVHmD_ECMLX7fX1i1ks6q7Y0W5gJ7nijEi3WFHLQkfntl1dkVM

बच्चों के भाषा सीखने के बारे में श्री कस्तूरीरंगन समिति के प्रस्ताव के ऊपर उद्धृत कथन की जब उपरोक्त शोध के नतीजों के साथ तुलना करते हैं तो यह बात समझ में आ जाती है कि सम्बंधित प्रस्ताव में यह बात बार-बार कही गई है कि खोज बताती है, लेकिन यह कहीं भी क्यों नहीं बताया गया कि कौन सी खोज बताती है, यानि कि प्रस्ताव में ऐसे सारे कथन संदर्भहीन हैं। यह निर्णय आप ही करें कि समिति के प्रस्ताव में बच्चे के कई-कई विदेशी भाषा सीखने की बारे में आधारहीन कथन जानकारी की कमी के कारण दाखिल हुआ है या सत्य के प्रति निष्ठा की कमी के कारण।

आज के विश्व में और भाषाएं सीखना महत्त्वपूर्ण ही नहीं बल्कि लगभग आवश्यक हो गया है। जैसा कि हमने ऊपर देखा है, खोज दर्शाती है कि और भाषा बड़ी उम्र में सीखना अधिक कारगर होता है। लेकिन इस मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए बाकी विश्व के व्यवहार पर नज़र डालना भी आवश्यक है। तो आईए! इस सम्बन्ध में सफल विश्व के व्यवहार पर नज़र डालें।

अमेरिका में भाषा नीति के बारे में कोई दिशा-निर्देश नहीं हैं; बहुत से राज्यों में प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च, और उच्चतर स्तर की शिक्षा के लिए ज़िला प्रशासन अपनी जरूरतों के अनुसार भाषाओं की शिक्षा तय कर सकता है। कई स्थानों पर भाषा के विषय की जगह कोई और विषय ले कर योग्यता पूरी की जा सकती है। उदाहरणतया, कैलिफोर्निया में उच्च विद्यालय का कोई विद्यार्थी विदेशी भाषा की जगह कोई और विषय ले सकता है। ओकलहोमा में कालेज में दाखले के लिए कंप्यूटर तकनालोजी या विदेशी भाषा का कोर्स एक की बजाय दो वर्ष के लिए किए होने की शर्त है। न्यू जर्सी में उच्च विद्यालय स्तर पास करने के लिए विदेशी भाषाओं में पांच अंक (क्रेडिट) या अंग्रेज़ी के इलावा किसी और भाषा में मुहारत जरुरी है।

अमेरिका अधिकतर अंग्रेज़ी भाषी है। इस लिए हमारे लिए वो देश अधिक प्रासंगिक हैं जो अंग्रेज़ी भाषी नहीं है।

यूरोप में दो विदेशी भाषाएं पढ़ने की व्यवस्था है। अधिकतर यूरोपीय देशों में पहली विदेशी भाषा की पढ़ाई ६ से ९ साल की उम्र में शुरू होती है। पर यह भी अल्ग-अल्ग देशों में अल्ग-अल्ग है। कई बार तो इक ही देस में अल्ग-अलग व्यवस्थाएं हैं। मिसाल के तौर पर, बेल्जियम में जर्मन भाषी पहली विदेशी भाषा ३ साल से ही पढ़ना शुरू कर देते हैं और दूसरी १३ साल से। इस की तुलना में फ़्लेमिश भाषी पहली विदेशी भाषा १० साल से पढ़नी शुरू करते हैं और दूसरी १२ से। बेल्जियम के फ्रांसीसी भाषी पहली विदेशी भाषा ८ या १० साल से शुरू करते हैं और दूसरी पढ़ना ज़रूरी नहीं है। बर्तानिया (यूके) में कुछ क्षेत्रों में ११ साल की उम्र से शुरू किया जाता है। यूरोप के ज़्यादातर देशों में दूसरी विदेशी भाषा बस एक साल के लिए पढ़ना ज़रूरी है। आयरलैंड में

चाहे अंग्रेज़ी और गैलिक पढ़ते हैं पर कोई विदेशी भाषा पढ़ना ज़रूरी नहीं है। (उपरोक्त आंकड़े पिऊ रिसर्च से साभार)।

यहां एक और आंकड़ा प्रासंगिक है; विदेशी भाषा के तौर पर अंग्रेज़ी की मुहारत में स्वीडन का दर्जा पहला और फ़िनलैंड का सातवां है। अधिक अंग्रेज़ी पढ़ाने वाले भारत का यह दर्जा २८वां है। जैसे-जैसे भारत में अंग्रेज़ी माध्यम में पढ़ाई बढ़ रही है तैसे-तैसे भारत का दर्जा नीचे जा रहा है; २०१३ में यह २१वां था जो २०१८ में २८वां हो गया।

चीन में अंग्रेज़ी भाषा की पढ़ाई तीसरी कक्षा से पढ़ाने की व्यवस्था है। पर स्थानीय स्कूल यह फैसला कर सकता है कि अंग्रेज़ी कब से पढ़ाना है। माध्यमिक स्कूलों में अंग्रेज़ी मुख्य विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। जहां अंग्रेज़ी तीसरी कक्षा से पढ़ाई जाती है वहां सप्ताह में तीन दिन ४०-४० मिनट की घंटी होती है। इस की तुलना में चीनी भाषा की पहली और दूसरी कक्षा में सप्ताह में नौ घंटियां होती हैं और तीसरी में सात। तीसरी से नौवीं तक चीनी और गणित मुख्य विषय हैं पर विज्ञान, अंग्रेज़ी और संगीत आदि गौण। पहली से छठी कक्षा तक सभी विषयों की कुल मिलाकर सप्ताह में १४ घंटियां होती हैं, यानि कि कुल नौ घंटे और बीस मिनट की पढ़ाई। (https://multilingual-education.springeropen.com/articles/10.1186/s13616-016-0026-0) पर फिर भी चीन के स्कूलों का दुनिया में १०वां दर्जा है। हमारा २००९ में ७४ में से दूसरा था पर नीचे से, मतलब ७४ में से ७३वां। उस के बाद भारत सरकार ने मुल्यांकन करने वाली संस्था (पीसा) को 'आतंकी' घोषित कर रक्खा है, मतलब कि भारत में दाखिल नहीं हो सकते।

हमारे लिए यह भी प्रासंगिक है कि इन सभी देशों में अंग्रेज़ी एक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है और इन में से किसी देश में भी अंग्रेज़ी शिक्षा का माध्यम नहीं है, इक्का-दुक्का अंतर्राष्ट्रीय स्कूलों को छोड़ कर।

यदि भारत की नई शिक्षा नीति के प्रस्ताव में भाषा के बारे में की गई सिफारिशों को देखें तो स्पष्ट दिखाई देता है कि बाकी दुनिया का जाकर हाल देखना तो दूर की बात सम्बंधित समिति ने अंग्रेज़ी भाषा की शिक्षा के सम्बन्ध में सर्वोपरि संस्था ब्रिटिश काउंसिल की किसी किताब पर भी नज़र नहीं डाली, और न ही किसी रूप में राय ली है। (ब्रिटिश काउंसिल के दफ्तर दिल्ली समेत भारत की लगभग प्रत्येक राजधानी में हैं)। ब्रिटिश काऊंसिल की २०१७ में छपी पुस्तक में यह दर्ज है (इंग्लिश लैंगुएज एंड मीडियम आफ़ इंस्ट्रक्शन इन बेसिक एजुकेशन...पन्ना ३):

“चारों ओर यह समझ फैली हुई है कि अंग्रेज़ी भाषा पर मुहारत के लिए अंग्रेज़ी एक विषय के रूप में पढने से अंग्रेज़ी माध्यम में पढना बेहतर तरीका है| पर इस समझ के लिए कोई प्रमाण हासिल नहीं है|” यूनेस्को की

पुस्तक (इम्प्रूवमेंट इन द कुआलटी आफ़ मदर टंग - बेस्ड लिटरेसी ऐंड लर्निंग, २००८, पन्ना १२) से निम्न उक्ति, जो इस बारे में दुनिया भर की खोज का सारांश पेश करती है, हमारे लिए और भी महत्त्वपूर्ण है:

"हमारे रास्ते में बड़ी रुकावट भाषा एवं शिक्षा के बारे में कुछ अंधविश्वास हैं और लोगों की आँखें खोलने के लिए इन अंधविश्वासों का भंडा फोड़ना चाहिए। ऐसा ही एक अन्धविश्वाश यह है कि विदेशी भाषा सीखने का अच्छा तरीका इसका शिक्षा के माध्यम के रूप में प्रयोग है (दरअसल, अन्य भाषा को एक विषय के रूप में पढ़ना ज्यादा कारगर होता है)। दूसरा अंधविश्वास यह है कि विदेशी भाषा सीखना जितनी जल्दी शुरू किया जाए उतना बेहतर है (जल्दी शुरू करने से लहजा तो बेहतर हो सकता है पर लाभ की स्थिति में वह सीखने वाला होता है जो मातृ-भाषा में अच्छी मुहारत हासिल कर चूका हो)। तीसरा अंधविश्वास यह है कि मातृ-भाषा विदेशी भाषा सीखने के राह में रुकावट है (मातृ-भाषा में मजबूत नींव से विदेशी भाषा बेहतर सीखी जा सकती है)। स्पष्ट है कि ये अंधविश्वास हैं और सत्य नहीं। लेकिन फिर भी यह नीतिकारों की इस प्रश्न पर अगुवाई करते हैं कि प्रभुत्वशाली (हमारे संदर्भ में अंग्रेज़ी - ज.स.) भाषा कैसे सीखी जाए।"

अंग्रेज़ी माध्यम को अंग्रेज़ी सीखने का तरीका अपनाने से कितने बड़े नुक्सान होते हैं यह भी ब्रिटिश काउंसिल की ऊपर बताई किताब में दर्ज इस कथन से स्पष्ट होता है (प. ३):

"छ: से आठ साल लगते हैं कि कोई बच्चा इतनी-एक अंग्रेज़ी सीख ले कि उसे पाठ्य-क्रम में शामिल विषय-वस्तु की समझ आ सके| इतने साल लगा कर भी वह अंग्रेज़ी इतनी अच्छी तरह नहीं सीख सकता कि वह उच्च श्रेणियों के पाठ्यक्रम को अच्छी तरह समझ सके|" यदि एक अंग्रेज़ी माध्यम स्कूल में जाने वाले विद्यार्थी का एक साल का खर्च पचास हज़ार रुपये भी मान लें तो आठ साल में यह बिना ब्याज के भी चार लाख बन जाएगा| सो भारत कितना पैसा अंग्रेज़ी माध्यम शिक्षा के कारण बर्बाद कर रहा है यह सोचने भर से व्यक्ति बेहोशी की अवस्था में जा सकता है| ब्रिटिश काउंसिल के इस कथन से आसानी से अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि अंग्रेज़ी माध्यम में शिक्षा से छह: से आठ सालों में ही कितने शैक्षिक, भाषिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक, और विकासपरक नुक्सान हो जाते हैं। मातृ-भाषा माध्यम स्कूलों के बच्चों को अंग्रेज़ी इस लिए नहीं आ रही क्योंकि वहां तो शिक्षा नाम की कोई चीज़ ही नहीं है और उन बच्चों की सामाजिक पृष्ठभूमी ऐसी है जहां शिक्षा के लिए उत्साह ही नहीं है|

पहले तमाम प्रस्तावों की तरह इस प्रस्ताव में भी मातृ-भाषा माध्यम में शिक्षा को उचित तो कहा गया है और इसकी सिफ़ारिश भी की गई है पर अंग्रेज़ी माध्यम की अनिवार्यता भी बताई गई है (शायद प्रस्ताव विभिन्न लोगों ने लिखा है और एक-दूसरे का लिखा पढ़ा नहीं है): 'जिन विद्यार्थियों की **(जिन विद्यार्थियों की)**

शिक्षा का माध्यम मातृ-भाषा होगा वे आठवीं कक्षा या इससे भी पहले विज्ञान मातृ-भाषा और अंग्रेज़ी दोनों में पढ़ेंगे।'

यह सही है, जैसा कि प्रस्ताव में दर्ज है, कि बच्चा एक से अधिक भाषाएं स्वाभाविक रूप से सीख जाता है पर यह सहज रूप से सीखना पारिवारिक और सामाजिक अनौपचारिक परिवेश में होता है न कि श्रेणी-कमरे के बनावटी चौखटे में। ऐसे प्रमाण हैं कि शुरू से ही एक से अधिक भाषाओं की औपचारिक सिखलाई अनावश्यक शैक्षिक बोझ तो बनती ही है यह बच्चे के भाषाई विकास में रुकावट भी बनती है। खोज यह भी बताती है कि यह अनौपचारिक और औपचारिक का बाल-भर दिखने वाला अंतर हिमालय पहाड़ से भी बड़ा है। इंग्लैंड में हुई खोज में यह पाया गया कि अनौपचारिक (स्वाभाविक) परिवेश में बच्चा दूसरी/विदेशी भाषा बालिग़ से बेहतर सीखता है पर औपचारिक (स्कूल के) परिवेश में बालिग बेहतर सीखता है

(https://theconversation.com/whats-the-best-way-to-teach-children-a-second-language-new-research-produces-surprising-results-122059?fbclid=IwAR1dTTxunVVHmD_ECMLX7fX1i1ks6q7Y0W5gJ7nijEi3WFHLQkfntl1dkVM)। सोचने वाली बात यह है कि एक भाषा (मातृ-भाषा और वह भी मातृ-भाषा परिवेश में) सीखने में बच्चे को कई साल लग जाते हैं उतनी भाषा बालिग कुछ महीनों में सीख जाता है। इस सम्बन्ध में एम.आई. टी. की पीछे बताई गई खोज अति प्रासंगिक है।

फ्रैंकफर्ट अंतर्राष्ट्रीय स्कूल की ओर से अंग्रेज़ी सीखने के बारे में यह उपदेश है:

"अंतर्राष्ट्रीय स्कूलों में अंग्रेज़ी को दूसरी/विदेशी भाषा के तौर पर पढ़ने वाले विद्यार्थी यदि मातृ-भाषा में प्रवीणता को बनाये रक्खें और इसका विकास करें तो वे अंग्रेज़ी और जल्दी व और प्रभावी ढंग से सीखते हैं।" (http://esl.fis.edu/parents/advice/intro.htm)

कस्तूरीरंगन समिति के प्रस्ताव में अंग्रेज़ी भाषा के सम्बन्ध में सिफारिशों को इस निबंध में बताये अंतर्राष्ट्रीय खोज के परिणामों और अंतर्राष्ट्रीय सफ़ल व्यवहार के ब्यौरे के सन्दर्भ में देखने से स्पष्ट होता है कि सम्बंधित सिफारिशें शुद्ध भ्रमों पर टिकी हैं और समिति ने विशेषज्ञ राय या सफ़ल अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की कोई परख-पड़चौल नहीं की।

भारतीय भाषा नीति की समस्या केवल भारतीय सरकारें और राजनैतिक दल ही नहीं हैं। हर क्षेत्र में अंग्रेज़ी का वर्चस्व स्थापित कर दिए जाने के कारण अधिकतर भारतीय जनमानस को भाषा के बारे में भ्रमों ने जकड़ा हुआ है। बहुत लोग हैं जो अंग्रेज़ी के मारे लोगों का उद्धार भी अंग्रेज़ी के ज़रिये ही करना चाहते हैं। ऐसों में इक प्रमुख नाम दलित अंदोलन से जुड़े बौद्धिक कांचा इलैया हैं जो सभी सरकारी स्कूलों को भी अंग्रेज़ी माध्यम करवाने में लगे हैं। उनका सोचना है कि दलित बच्चे मुख्य रूप से सरकारी स्कूलों में जाते हैं और अंग्रेज़ी

माध्यम से वंचित होने के कारण मुकाबले से बाहर हो जाते है; जबकि पर्याप्त अंतर्राष्ट्रीय प्रमाण प्राप्त हैं कि यदि शिक्षा मातृ-भाषा में हो तो वंचित और धनवान बच्चो में शिक्षा की प्राप्तियों की खाई कम होती है; पर यदि शिक्षा का माध्यम मातृ-भाषा नहीं है तो यह खाई और बड़ी हो जाती है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि ऐसे घोषित रूप से जन साधारण हितैषी बौद्धिक सज्जनों की स्थिति भी भारतीय नीतिकारों जैसी भ्रमित ही है। मैंने प्रो. कांचा इलैया जी को पत्र लिख कर ब्रिटिश काऊंसिल, यूनेस्को और दुनिया भर की खोज और सफ़ल व्यवहार की सारी बातें उनके सामने रक्खीं थीं। इन पर संवाद करना तो दूर की बात, मुझे अभी तक अपने पत्र का कोई उत्तर तक प्राप्त नहीं हुआ है।

२१वीं सदी के दो कम इक्कीसवें साल में यह बताने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि अंतर्राष्ट्रीय मंडी-मार-काट युग में शिक्षा जैसे संवेदनशील क्षेत्र को भ्रम-यान पर बिठा कर युद्ध-क्षेत्र में भेजना इसकी जान के लिए सुरक्षति है या नहीं।

मेरे ख्याल में, भारतीय भाषा नीतिकारों के फैसलों और व्यवहार के बारे में सही राय एक कथन प्रकट करता है जो किसी ने फेसबुक पर डाला था, इस प्रश्न के उत्तर के रूप में कि भारत चीन की तरह मोबाईल क्यों नहीं बना सकता। उस सज्जन का उत्तर का एक अंश था कि "हम अभी अपने श्रेणी-कमरों में बैठे उन नीतिकारों की ओर देख रहे हैं जिन्हें यह पक्का विश्वाश है कि एक साधारण स्नातक (ग्रेजुएट) एक 'राष्ट्रीय परीक्षा' पास करने के बाद सौ साल की विशिष्ट शिक्षा और ज़मीनी तजुर्बे वाले विशेषज्ञ के फैसले को रद्द कर सकता है; और इस नीतिकार की अगुवाई कानून बनाने वालों की एक टोली कर रही है जिनके लिए स्कूल स्तर की शिक्षा भी जरूरी नहीं है।"

मेरी राय एक बात पर इस सज्जन की राय से अल्ग है। वह यह कि अधिकतर लोग जो स्कूल नहीं गए हैं भाषा नीति के बारे में इन 'राष्ट्रीय परीक्षा' पास नीतिकारों से बेहतर दृष्टिकोण रखते हैं।

डा. जोगा सिंह विर्क
प्रो. (सेनि) भाषा विज्ञान
#५० वालिया इनक्लेव, सामने पंजाबी विश्वविद्यालय
पटियाला - १४७ ००२
Mobile: +91-9915709582, +91-9988531582 (whatsapp)
E-mail: jogasinghvirk@yahoo.co.in, virkjoga5@gmail.com
Web: http://punjabiuniversity.academia.edu/JogaSingh/papers
Facebook: https://www.facebook.com/joga.virk.39
YouTube: https://www.youtube.com/channel/UCcuqlzPpaMJogbwN3I6DLkg/videos

*****